श्रीमति दम्यंती बाई

बनाम

श्री के.एम. शफी

04 अगस्त 2004

(अशोक भान और एच.एच. कपाडिया, जेजे)

सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 आदेश XIII नियम 3

साक्ष्य अधिनियम 1872 धारा 65

सिविल मुकदमा- द्वितीयक साक्ष्य प्रस्तुत करना- कोई आपत्ति नहीं उठाई गई परीक्षण चरण में साक्ष्य के विरूद्ध बहस अपीलीय स्तर पर साक्ष्य के तरीके पर आपत्ति- ऐसी आपत्ति की अनुमति- धारितः प्रमाण का तरीका प्रक्रियात्मक कानून के अंतर्गत आता है इस तरह की आपत्ति को दस्तावेज को एक प्रदर्शनी के रूप में चिन्हित करने और रिकॉर्ड में स्वीकार करने से पहले लिया जा सकता है, न कि अपीलीय स्तर पर।

प्रतिवादी- वादी ने मुकदमें की साजिश की घोषणा के लिये एक मुकदमा दायर किया यह उनकी और उनके भाई की पूर्ण संपत्ति थी और उन्होंने निषेधाज्ञा मांगी कि अपीलकर्ता- प्रतिवादी को मुकदमें की संपत्ति में प्रवेश करने से रोकना। प्रतिवादी के अनुसार यह उपाधि उसे जी के पुत्रों के माध्यम से एक पंजीकृत विक्रय विलेख 14.11.1944 प्रदर्श पी- 1 और उसके बाद प्रदर्श पी- 2 एक उपहार विलेख के माध्यम से मिली। अपीलकर्ता ने केवल वाद संपत्ति के एक हिस्से पर स्वामित्व का दावा किया का मालिक होने का दावा पत्नी जी के माध्यम से किया। अपीलकर्ता ने प्रदर्श पी- 1 बिक्री की प्रमाणित प्रति को चुनौती नही दी और प्रदर्श पी- 2 ट्रायल कोर्ट ने यह कहते हुऐ मुकदमें पर फैसला सुनाया कि प्रदर्श पी- 1 स्वीकार्य था क्योंकि दस्तावेज 30 वर्ष पुराना था और इसलिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 90 के तहत अनुमान उसी पर लागू होता है और वह प्रदर्श पी- 2 साबित हुआ। निचली अपीलीय अदालत ने मुकदमा खारिज कर दिया क्योंकि प्रदर्श पी- 1 व पी- 2 मूल विक्रय पत्र साबित नहीं हुये क्योंकि मूल विक्रय

पत्र प्रदर्श पी- 1 को पेश नहीं किया गया था, जिसकी वादी ने नींव नहीं रखी थी। धारा 65 ए और एफ के तहत द्वितीयक साक्ष्य की स्वीकार्यरता हेतु दूसरी अपील में उच्च न्यायालय ने ट्रायल कोर्ट के आदेश को बरकरार रखा।

इस न्यायालय में अपील में अपीलकर्ता ने तर्क दिया है कि प्रमाणित प्रति विक्रय विलेख द्वितीयक साक्ष्य होने के कारण स्वीकार्य नहीं था क्योंकि मूल विक्रय पत्र प्रस्तुत करने के लिये कोई कदम नहीं उठाये गये और न ही नुकसान को साबित करने के लिये कोई कदम उठाया गया। याचिका खारिज करते हुये कोर्ट ने कहा अभिनिर्धारित किया:

1.1 वर्तमान मामले में, आपत्ति यह नहीं थी कि पूर्व की प्रमाणित प्रति पी- 1 अपने आप में स्वीकार्य है लेकिन साबित करने का तरीका अनियमित व अपर्याप्त था। साबित करने के तरीके पर आपत्ति प्रक्रियात्मक काननू के अंतर्गत आता है इसलिए ऐसी आपत्तिया हो सकती है। माफ कर दिया गया। दस्तावेज को एक प्रदर्शनी के रूप में चिन्हित करने और रिकॉर्ड में शामिल करने से पहले उन्हें ले जाना होगा। (341- सी- डी)

आर.वी.ई. वंकटचला गौंडर बनाम अरूल्मिगु विश्वेसरस्वामी और वी.पी.टेम्पल और अन्य, (2003) 8 SCC 752 और गोपाल दास और अन्य बनाम श्री ठाकुरजी एवं अन्य, AIR (1943) PC 83, पर निर्भर था।

सरकार द्वारा साक्ष्य 15 वां संस्करण, पृष्ठ 1084, संदर्भित।

1.2. वर्तमान मामले में, जब वादी ने प्रमाणित आवेदन प्रस्तुत किया साक्ष्य में विक्रय विलेख प्रदर्श पी- 1 की प्रतिलिपि और विक्रय विलेख कब था रिकॉर्ड पर लिया गया और एक प्रदर्शन के रूप में चिन्हित किया गया, तो अपीलार्थी ने कोई आपत्ति नहीं जताई। यहां तक कि पूर्व का निष्पादन पी- 2 को चुनौती नहीं दी गई, परिस्थितियों में, यह अपीलार्थी के लिए निचले अपीलीय न्यायालय के समक्ष सबूत के तरीके पर आपत्ति करने के लिए खुला नहीं था। यदि आपत्ति मुकदमें के चरण में ली गई होती, तो वादी मूल बिक्री विलेख को बुलाकर इसे पूरा कर सकता था जो संपार्श्विक कार्यवाही में दर्ज था। (343- सी- डी)

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील सं0 2434/2000

कर्नाटक उच्च न्यायालय के आर. एस. ए. सं. 802/1995 में 18.12.1998 दिनांकित निर्णय और आदेश से।

अपीलार्थी के लिये किरण सूरी।

एस के कुलकर्णी एम. गिरीश कुमार और अंकुर एस. कुलकर्णी। उत्तरदाताओं के लिये ख्वैरकप, नौबिन सिंह।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया था।

कपाडिया जे.:

विशेष अनुमति द्वारा यह अपील मूल द्वारा दायर की जाती है। कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा 1995 के आर.एस.ए.सं. 802 में पारित 18 दिसम्बर 1998 के निर्णय और आदेश के विरूद्ध प्रतिवादी।

संक्षेप में इस अपील के उत्पन्न होने वाले तथ्य निम्नलिखित हैः

के.एम. शफी, यहां के उत्तरदाता ने बेल्लारी के मुख्य मुंसिफ न्यायालय में ओ.एस. नंबर 451/84 का मुकदमा दायर किया (इस स " क्षेप में परीक्षा न्याय संक्षेप के लिये संदर्भित किया गया हैं)। मुख्य सार्वजनिक मुंसिफ बेल्लारी कोर्ट में एक ऐसे घोषणा के लिये मुकदमा दायर किया गया कि बी.टी.एस. नंबर 272- ए और टी.एस. नंबर 273- ब का एक हिस्सा, जो 80'x120' का है। (स " क्षेप के लिये मुक में संदर्भित किया गया है) उसका और उसके भाई की निरपेक्ष संपत्ति थी। उक्त मुकदमें में वादी ने निषेधाज्ञा की मांग की और अपीलार्थी (प्रतिवादी) को वाद प्लॉट में प्रवेश करने से रोकने की भी मांग की गई थी।

टी.जी. श्रीनिवास पिल्लई, ती.जी. विवेकानंद पिल्लई और ती.जी. सत्यनारायण पिल्लई, गुरूनाथम पिल्लई के पुत्र थे जो मुकदमा जमीन के मालिक थे, जिसका नंबर 635R (जिसे टी.एस. 272 में संशोधित किया गया था) और विमापन 90 सेंट था, और स.नं. 635T (टी.एस. 273 में संशोधित किया गया) और विमापन 5 एकड 38 सेंट था। गुरूनाथम पिल्लई के पुत्रों ने उपर्युक्त जमीन को खान साहेब अब्दुल हाय को बिक्री विलेख

दिनांकित 14.12.1944 (प्रदर्श पी- 1) के माध्यम से 300 रुपये में बेच दिया था, खान साहेब अब्दुल की मृत्यु 1947 में हो गई और वे अपने पीछे अपने दो बेटों बशीर और मुनीर को छोड गये। जिन्होने उपर्युक्त जमीनों को एक व्यक्ति सत्तार (दावेदार के पिता) और रहीमान (दावेदार के चाचा) को गिफ्ट दीद दिनांक 20.06.1966 (प्रदर्श पी- 2) के तहत उपहार में दिया। सत्तार और रहीमान ने उपर्युक्त जमीनों को उप- विभाजित कर लिया। मुख्य मुंसिफ, बेल्लारी के दर्जे की प्रमुख मुंसिफ, बेल्लारी के फाइल नंबर 381/172 पार्टीशन मुकदमा में प्लेंटिफ (यहां के दावेदार) और उनके भाई ने उपविभाजित प्लॉट नंबर टी.एस. 272 ए और टी.एस 273 बी को प्राप्त किया, जिसमें समाविष्ट था मुकदमा जमीन जो आकार 80'x120' था। वर्तमान शीर्षक मुकदमा तब दायर किया गया था जब अपीलार्थी मुकदमा जमीन पर प्रवेश करने का प्रयास किया था।

लिखित कथन में, अपीलार्थी ने यहां दलील दी थी कि मुकदमा जमीन, जिसका आकार 80'x120' था, एक अलग जमीन था और कि यह T.S. 272 ए और T.S. 273 बी का हिस्सा नहीं था, जैसा कि इस पर आरोप लगाया गया था। यह दलील दी गयी थी कि मुकदमें के भूखंड का नगरपालिका द्वारा अलग से मूल्यांकन किया गया था। यह दलील दी गई थी कि 19.07.1967 पर अपीलार्थी के पति ने एक राजारत्नम से सूट प्लॉट खरीदा था। कि अपीलार्थी के पति ने बाद में 12.01.1973 पर अपीलार्थी के पक्ष में निपटान विलेख निष्पादित किया था और अपीलार्थी के कब्जे में था और मुकदमा भूखंड का आनंद ले रहा था। कि राजारत्नम ने 1965 में गुरूनाथम पिल्लई की पत्नी से मुकदमा जमीन खरीदा था। लिखित कथन में, अपीलार्थी ने इस बात से इंकार किया कि गुरूनाथम के पुत्रों ने खान साहब अब्दुल को जमीन बेच दी थी, जैसा कि आरोप लगाया गया था। यह तर्क दिया गया कि बेटों को उक्त भूमि बेचने का कोई अधिकार नहीं था। कि गुरूनाथम की पत्नी मालिक थी कि उन्होने खान साहब के पक्ष में कोई हस्तांतरण नहीं किया था। लिखित कथन में, अपीलार्थी ने खान साहब के पुत्रों द्वारा सत्तार और रहीमान को दिया गया दान को इंकार किया।

विचारण न्यायालय के समक्ष निर्धारण के लिये दो मुख्य बिंदु सामने आए।

सबसे पहले, क्या वादी वाद भूखण्ड का मालिक है। दूसरा, क्या मुकदमा जमीन T.S. 272A और T.S. 273B का हिस्सा था। पीडब्ल्यू 01 के अनुसार, उनका शीर्षक

गुरूनाथम के पुत्रों के माध्यम से आया था जिसमें प्रदर्श पी- 1 शामिल है, जो 14.11.1944 को पंजीकृत बेचने का दस्तावेज था और फिर प्रदर्श पी- 2 के तहत आया, जो खान साहेब के पुत्रों द्वारा सत्तार और रहीमान के पक्ष में किया गया निष्पादित उपहार विलेख है। दूसरी ओर, अपीलार्थी (प्रतिवादी) ने केवल मुकदमा जमीन का मालिकाना दावा किया, जिसका आकार 80'x120' था। उन्होंने इसे अलग संपत्ति माना। उन्होनें अपना मालिकाना शीर्षक गुरूनाथम की पत्नी को प्रमाणित किया। उन्होनें तर्क दिया कि गुरूनाथम के बेटों को बेचने का कोई अधिकार नहीं था।

ट्रायल कोर्ट ने यह पाया कि 14.11.1944 को जब गुरूनाथम पिल्लई के पुत्रों ने उपरोक्त भूमि को खान साहेब अब्दुल को बिक्री विलेख प्रदर्श पी- 1 के माध्यम से 300 रुपये में बेचान किया, तब गुरूनाथम की पत्नी को 1965 में अपने गठित वकील के माध्यम से राजारत्नम को सूट प्लॉट बेचने का कोई अधिकार नहीं था, जिनसे अपीलार्थी के पति ने सूट प्लॉट खरीदने का दावा किया था। निचली अदालत ने आगे कहा कि उसके समक्ष कोई याचिका नहीं थी कि गुरूनाथम की पत्नी पूर्ण मालिक थी। निचली अदालत ने प्रदर्श पी- 1 से पाया कि गुरूनाथम के बेटों ने पारिवारिक आवश्यकता के लिये जमीने बेच दी थी। इन परिस्थितियों में, निचली अदालत ने माना कि कोई भी अधिकार राजारत्नम में निहित नहीं था। ट्रायल कोर्ट ने आगे पाया कि प्रदर्श पी- 1, 30 साल से अधिक पुराना दस्तावेज था और साक्ष्य अधिनियम की धारा 90 के तहत पारित उपधारणा लागू होती है। प्राथमिक न्यायालय के समक्ष प्रदर्श पी- 2 प्राथमिक दोषी द्वारा प्रमाणित हुआ, जिसने बशीर और मुनीर के प्रतिनियुक्त वकील पीडब्ल्यू 02 की गवाही दी थी और प्रदर्श पी- 2 के निर्वाचन का विरोध नहीं किया गया।

इस चरण पर, उसका उल्लेख किया जा सकता है कि अपलार्थी ने 14.11.1944 को पंजीकृत बेचने की दस्तावेज (प्रदर्श पी- 1) के प्रमाण के रूप में चिन्हित और स्वीकृत करने के लिये खिलाफ आपत्ति नहीं की। अपीलार्थी ने प्रदर्श पी- 2 के निष्पादन को भी चुनौती नहीं दी। इसलिए निचली अदालत ने मुकदमें का फेसला सुनाया।

प्राथमिक न्यायालय द्वारा दिये गये आदेश से आहत होकर, इस अपीलार्थी ने यहां अपील की जो की सिविल जज, बेल्लारी की अदालत में नंबर 36/1988 के रूप में प्राधिकृत अपील की। (यह' I" ' संक्षेप के लिये न्या

संदर्भित किया गया हैं), जिन्होने यह दृष्टि रखी कि प्राथमिक दोषी के रूप में यहां विचलित होकर क्या पूर्वी प्रमाण वाक्य प्रदर्श पी- 1 और प्रदर्श पी- 2 को साबित करने में विफल रहे क्योंकि ना तो निर्वाचक और मतदाता को परीक्षण किया गया था। कि प्रदर्श पी- 1 और प्रदर्श पी- 2 को कार्यवाही करने के रूप में नहीं लिया जा सकता था क्योंकि मूल दस्तावेज दिनांक 14.11.1944 को (प्रदर्श पी- 1) नहीं प्रस्तुत किया गया था। न्यायिक अपीलीय न्यायालय ने पाया कि प्राथमिक दोषी ने दुबारा साबित करने के लिये द्वितीयक प्रमाण के प्रवेश के लिये आवश्यक आधार नहीं रखा था। धारा 65(ए) और (एफ) के तहत और इस परिस्थितियों में बेचने का प्रमाण नहीं हुआ था। निचली अपीलीय अदालत में कहां यद्यपि मूल विलेख संपाश्विक कार्यवाही में उपलब्ध था। वादी ने वर्तमान वाद में इसे विचारण न्यायालय के समक्ष पेश करने के लिये कोई कदम नहीं उठाया। निचली अपीलीय अदालत ने आगे पाया कि वकील की शक्ति पीडब्ल्यू 02 के पक्ष में विधिवत पंजीकृत किया गया था कि वादी इसे उपपंजीयक के कार्यालय से बुला सकता था परंतु ऐसा नहीं किया गया। ऐसी परिस्थितियों में, निचली अपीलीय अदालत इस निष्कर्ष पर पहुंची कि प्रदर्शनी पी- 01 व पी- 02 दोनों साबित नहीं हुये थे। नतीजतन, कम अपीलीय न्यायालय ने अपील को स्वीकार कर लिया और वादी द्वारा दायर मुकदमे को खारिज कर दिया।

> "निचली अपीलीय न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर, मूल वादी के रूप में के.एम. शफी ने सीपीसी की धारा 100 के अंतर्गत उच्च न्यायालय के समक्ष दूसरी अपील प्राधिकृत की। दूसरी अपील के प्रमाण में, उच्च न्यायालय ने निम्नलिखित महत्वपूर्ण कानूनी सवाल क‘ ो तय कियाः क्या निचली अपीलीय न्यायालय ने यह ठहराने में गलती की है कि विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रतियां और उपहार विलेख क्रमशः प्रदर्श पी- 1 व पी- 2 होने के कारण साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं है और इस तरह वादी मुकदमा जमीन के समक्ष अपना शीर्षक साबित करने में विफल रहे ?”

उच्च न्यायालय ने विभिन्न प्राधिकृतियों के विचार करने के बाद यह निष्कर्ष पर पहुंचा कि क्योंकि प्रदर्श पी- 1 की प्रमाणित प्रति है और क्योंकि यह 30 वर्ष से अधिक पुराना दस्तावेज है, इसका प्रमाण अधिनियम की धारा 90 के तहत की गई प्रतियान्त्रित

करने में ट्रायल कोर्ट सही था। इस परिणामस्वरूप, यह अपील मंजूर की गई थी। इसलिए, यह सिविल अपील है।

मिसेज किरण सुरी, प्राधिकृत सलाहकार जो अपीली की ओर से प्रस्तुत हुई, ने यह दावा किया कि एक बार जब किसी दस्तावेज को प्रमुख प्रमाण के अभाव में साबित करने के योग्य नहीं होता है तो सैकण्डरी प्रमाण की आधार रखी जानी चाहिए। बिना इसके ऐसे सेकण्डरी प्रमाण को अस्वीकार्य माना जाता है। वर्तमान मामले में, वादी द्वारा मूल बिक्री विलेख प्रस्तुत करने के लिए कोई कदम नहीं उठाये गये थे कि मूल बिक्री विलेख के नुकसान को साबित करने के लिए कोई कदम नहीं उठाए गये थे कि उस शर्त को स्थापित करने के लिए कोई कदम नहीं उठाए गये जिनसे प्रमाणित प्रति प्राप्त की गयी थी। उसने प्रस्तुत किया कि यदि आधार धारा 65 के तहत रखा गया है और यदि वादी यह साबित करने में सक्षम है कि बिक्री विलेख गुम हो जने पर द्वितीयक साक्ष्य स्वीकार्य था, लेकिन इस तरह के अभाव में, उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करने में गलती की कि बिक्री विलेख की पंजीकृत प्रमाणित प्रति साक्ष्य में स्वीकार्य थी क्योंकि प्रस्तुत किया गया दस्तावेज 30 साल से अधिक पुराना था।

हम इस दीवानी अपिल में योग्यता नहीं पाते है। वर्तमान मामले में आपत्ति यह नहीं थी कि प्रदर्श पी- 1 की प्रमाणित प्रति अपने आप में अस्वीकार्य है, बल्कि यह कि प्रमाण का तरीका अनियमित और अपर्याप्त था। सबुत के तरीके के बारे में आपत्ति प्रक्रियात्मक कानून के अन्तर्गत आती है इसलिए इस तरह की आपत्तियां माफ की जा सकती है। इन्हे प्रस्तुत किये जाने से पहले दस्तावेज को एक प्रदर्श और रिकॉर्ड में स्वीकृत किया जाना चाहिए (सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश नियम 3 देखें)। आर.वी.ई. वैंकटचाला गौंडर बनाम मामले में इस न्यायालय के फेसले में इस पहलु को संक्षेप में सामने लाया गया है। अरूल्मिगु विष्वेसरस्वामी और वी.पी. मंदिर और एक अन्य ने (2003) 8 एस.सी.सी. 752 में बताया कि हम में से एक जे.भान, पैरा 20 के माध्यम से एक पार्टी में थेः

> “20. प्रतिवादी के लिए विद्वान वकील प्रतिवादी ने Roman Catholic Mission v. State of Madras, AIR (1966) SC 1457 का सहारा लिया है, जिसके अनुसार साक्षात्कार में प्रस्तुत किया गया एक

दस्तावेज जो स्वीकृति के लिए उपयुक्त नहीं है, हालांकि रिकॉर्ड में लाया गया है, उसे विचार से बाहर रख देना चाहिए। इस प्रस्ताव पर हमारा कोई विवाद नहीं है। लेकिन वर्तमान में एक ऐसा मामला है जो कानून की सही स्थिति बनाने की मांग करता है। सामान्यतः साक्षात्कार की योग्यता की आपत्ति को तब उठानी चाहिए जब वह प्रस्तुत किया जाता है और फिर बाद में नहीं। प्रमाणित प्रतियों की योग्यता के बारे में आपत्तियों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता हैः (i) एक आपत्ति है कि दस्तावेज जिसे साबित करने की कोशिश की जाती है, वह स्वयं साक्ष्य में अस्वीकार्य है। और (ii) जहां आपत्ति प्रमाण के तरीके को नियम विरूद्ध या अपर्याप्त मानकर की जाती है, लेकिन इससे दस्तावेज की योग्यता को विवादित नहीं किया जाता है। पहले मामले में, क ` वल इस कारण कि को
प्रम’ ाणित के रूप में चिन्हित किया ,गप्रमाहैता के संबंध में आपत्ति को बाहर नहीं किया जाता है और यह बाद के चरण में या अपील या संशोधन में भी उठाई जा सकती है। बाद के मामले में, आपत्ति तब ली जानी चाहिए जब सबूत हो और एक बार दस्तावेज को साक्ष्य में स्वीकार कर लिया जाता है और एक प्रदर्श के रूप में चिन्हित, आपत्ति कि इसे साक्ष्य में स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए था या कि साबित करने के लिये अपनाया गया तरीका दस्तावेज अनियमित है जिसे किसी भी समय उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। दस्तावेज को एक प्रदर्शनी के रूप में चिन्हित करने के बाद का चरण। बाद वाला प्रस्ताव निष्पक्ष खेल का नियम है। महत्वपूर्ण परीक्षण यह है कि क्या कोई आपत्ति, यदि उचित समय पर ली जाती है, प्रमाणित दस्तावेज को चिकित्सा करने और साक्षात्कार के तरीके को पारंपरिक बनाने की संभावना देने की अनुमति देती हैं। आपत्ति करने में चूक घातक हो जाती है क्यांकि उसकी विफलता से पार्टी आपत्ति का हकदार साक्ष्य देने वाले पक्ष को इस धारणा पर कार्य करने की अनुमति देता है कि विरोधी पक्ष प्रमाण के तरीके के प्रति गंभीर नहीं है। दूसरी ओर, एक त्वरित आपत्ति दो कारणों से साक्ष्य देने वाले पक्ष

पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालती है। सबसे पहले, यह अदालत को अपने विभाग को लागू करने और अपना निर्णय देने में सक्षम बनात है तब और वहां स्वीकार्यता के प्रश्न पर और दूसरा साक्ष्य देने वाले पक्षकार के विरूद्ध जाकर साक्ष्य के माध्यम से अदालत के निष्कर्ष को अपनाने की स्थिति में, अनुमति देने के लिये अदालत से अनुग्रह प्राप्त करने का अवसर नियमित विधि या प्रमाण की विधि और इस प्रकार को हटाना विरोधी पक्ष द्वारा उठाई गई आपत्ति, साक्ष्य या नेतृत्व करने वाले पक्ष के लिये उपलब्ध है। इस तरह की प्रथा और प्रक्रिया दोनों के लिये उचित है। उपर उल्लिखित दो प्रकार की आपत्तियों में से, बाद के मामले में, शीघ्र और समय पर, आपत्ति उइाने में विफलता पर जोर देने की आवश्यकता को माफ करने के बराबद है। एक दस्तावेज का औपचारिक प्रमाण वह दस्तावेज जिसे सबूत में स्वीकार्य करने की कोशिश की जाती हैं। पहले मामले में, स्वीकृति किसी वरिष्ठ अदालत में आपत्ति उठाने के लिये कोई बाधा नहीं होगी।"

इसी प्रभाव से हैं कि गोपाल दास और अन्य बनाम श्रीठाकुरजी और अन्य AIR (1943) पी.सी. में रिपोर्ट की गई जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जब सबूत के तरीके पर आपत्ति दर्ज नहीं की जाती है, तो पक्ष तब तक झूठ नहीं बोल सकता जब तक कि मामला अदालत के समक्ष नहीं आता है और फिर पहली बार सबूत के तरीके की शिकायत करता है। यह आपत्ति की जानी चाहिए कि दस्तावेज अपने आप में अस्वीकार्य है। लेकिन सबूत का तरीका अनियमित था, यह आवश्यक है कि दस्तावेज को चिन्हित करने से पहले मुकमदें में आपत्ति ली जानी चाहिए। एक प्रदर्शनी के रूप में और रिकॉर्ड में स्वीकार किया गया। इसी तरह साक्ष्य पर सरकार 15 वें संस्करण, पृष्ठ 1084 में यह कहा गया है कि दस्तावेजों को निचली अदालत में बिना किसी आपत्ति के स्वीकार किया जाता है, बाद में अपील की अदालत में उनकी स्वीकारिता पर कोई आपत्ति नहीं ली जा सकती। एकपक्ष साक्ष्य में एक प्रमाणित प्रति देता है उन परिस्थितियों को साबित किये बिना जो उसे द्वितीयक साक्ष्य देने का हकदार बनाती है। ऐसी आपत्ति प्रवेश के समय ली जानी चाहिए और इस तरह की आपत्ति को बाद के चरण मे अनुमति नहीं दी जायेंगी।

वर्तमान मामलें में, जब परिवादी ने एक प्रमाणित प्रति प्रस्तुत की साक्ष्य में विक्रय विलेख प्रदर्श पी- 1 है और जब विक्रय विलेख को अभिलेख में लिया गया और एक प्रदर्शनी के रूप में चिन्हित किया गया, तो अपीलार्थी ने कोई आपत्ति नहीं उठाई। यहां तक कि प्रदर्श पी- 2 के निष्पादन को भी चुनौती नहीं दी गई थी। इन परिस्थितियों में, यह अपीलार्थी के लिये खुला नहीं था कि वह निचली अपीलीय न्यायालय के समक्ष सबूत के तरीके पर आपत्ति करे। यदि आपत्ति परीक्षण चरण में ली गई थी, तो वादी मूल बिक्री विलेख के लिये कॉल करके इसे पूरा कर सकता था जो संपाश्विक कार्यवाही में रिकॉर्ड पर था। लेकिन चूंकि अपीलार्थी की ओर से कोई आपत्ति नहीं थी, इसलिए 14.11.1944 दिनांकित बिक्री विलेख को प्रदर्श पी- 1 के रूप में चिन्हित किया गया था और इसे बिना किसी आपत्ति के अभिलेख में स्वीकार कर लिया गया था।

पूर्वगामी कारणों से, हम इस दीवानी अपील में कोई योग्यता नहीं पाते हैं और उसी के अनुसार खारिज कर दिया जाता है, लागत के रूप में कोई आदेश नहीं।

याचिका खारिज कर दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी तमन्ना कौशिक (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने
उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी मान्य होगा।